वैदिक देवता

उद्भव और विकास

गयाचरण त्रिपाठी

प्राक्कथनम्

श्रीमद्भिर्विद्वद्वर्यैस्त्रिपाठ्युपाह्वै 'र्गयाचरण 'नामधेयैर्बहुभ्यो वर्षेभ्य: प्राग् विरचितं, प्रकाशितं चैतद् 'वैदिक देवता : उद्भव और विकास'-संज्ञकं ग्रन्थरत्नं तैरेव संशोधितं पुनरीक्षितं सत् पुनरपि राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानेन प्रकाश्य सुलभीक्रियते वैदिकदेवशास्त्रतत्त्वविविदिषूणां कृते इति मोमुद्यते नश्चेत:। ग्रन्थोऽयं प्राय: त्रिंशद्वर्षेभ्य: प्राग् भागद्वये प्रकाशित: सन् प्रकाशनसमनन्तर- मेवाल्पीयसा कालेन दौर्लभ्यं गत:। विविधेषु विश्वविद्यालयेषु स्नातक-परास्नातकश्रेणीष्वधीयानानां छात्राणां कृते पाठ्यत्वेन संस्तुतस्य अथ चास्माभिर्भारतीयैरुपास्यमानानां देवानां स्वरूपविकासस्यैतिहासिकं क्रमं जिज्ञासमानानां विदुषां कृते ग्रन्थस्योपयोगित्वं सुस्पष्टम्। 'इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेद्' इति प्राचीनामुक्तिं प्रमाणपथमारोपयतोऽस्य ग्रन्थस्य संस्थानेन प्रकाशनं समेषां प्रत्नतत्त्वजिज्ञासूनां कृते प्रमोदाय कल्पिष्यत इति आशास्ते,

विदुषामाश्रव:
राधावल्लभ त्रिपाठी
कुलपति:

यद्विष्णुक्रमान् क्रमते विष्णुरेव भूत्वा यजमानः..... इमाँल्लोकान् अनपजय्यम् अभिजयति। — तै० सं० ५२।१

विष्णुक्रमान् क्रमते विष्णुर्भूत्वा इमाँल्लोकानभिजयति। — तै० ब्रा० १।७।४।४

राजसूय यज्ञ के अवसर पर शार्दूल चर्म के ऊपर राजा के लिए तीन पग चलने का विधान है। श० ब्रा० का कथन है कि इन विष्णु-क्रमों को करने से वह इन सब लोकों के ऊपर हो जाता है, पहले वह इनके भीतर ही था —

अथैनमन्तरेव शार्दूलचर्मणि विष्णुक्रमान् क्रमयति ..... इमे वै लोका विष्णोर्विक्रमणम्। विष्णोः विक्रान्तम्। विष्णोः क्रान्तम्। तदिमानेव लोकान्[१] त्समारुह्य सर्वमेवेदमुपर्यपरि भवति। अर्वागेवास्माद् इदं सर्वं भवति। — श० ब्रा० ५।४।२।६

ब्राह्मण ग्रन्थों के इन्हीं उल्लेखों में उसे सुन्दर तथा रम्य कथा के बीज वर्तमान हैं, जो बाद में भगवान् विष्णु के वामन-अवतार के लम्बे आख्यान के रूप में विकसित हुई[२]। इसी ब्राह्मण में एक अन्य स्थान पर (१।२।५।१-७) विष्णु की तीन पदक्रमों से समस्त ब्रह्माण्ड को व्याप्त करने की यह विशेषता एक छोटी सी यज्ञ सम्बन्धी कथा का आधार है —

देवाश्च वा असुराश्च उभये प्राजापत्याः पस्पृधिरे। ततो देवा अनुव्यमिवासुः। अथ ह असुरा मेनिरे अस्माकमेवेदं खलु भुवनमिति। तां होचुः हन्तेमां पृथिवीं विभजामहै। तां विभज्योपजीवामेति। तामौक्ष्णैश्चर्मभिः पश्चात् प्राञ्चो विभजमाना अभीयुः। तद्वै देवा शुश्रुवुः, विभजन्ते ह वा इमामसुराः मेदिनीम्। प्रेत, तदेष्यामो यत्रेमामसुरा विभजन्ते। के ततः स्याम यदस्यै न भजेमहीति। ते यज्ञमेव विष्णुं पुरस्कृत्येयुः। ते होचुः अनु नो अस्यां पृथिव्यामाभजत। अस्त्येव नो अप्यस्यां भाग इति। ते हासुरा असूयन्त इवोचुः। यावदेवैष विष्णुरभिशेते तावद्वो दद्मः इति। वामनो ह विष्णुरास। तद्वै देवा जिहीडिरे। महद्वै नो अदुः ये नो यज्ञसम्मितमदुरिति। ते प्राञ्चं विष्णुं निपाद्य छन्दोभिरभितः पर्यगृह्णन्। तं छन्दोभिरभितः परिगृह्य अग्निं पुरस्तात्

---

१. प्रतीत होता है कि यहाँ पर लोक शब्द अपने दोनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। इस शब्द का अर्थ 'भुवन' के साथ-साथ 'लोग' या 'सामान्यजन' भी होता है। विष्णु अपने पदक्रमों से सम्पूर्ण लोकों से ऊपर हो गए तो राजा इन पदक्रमों से सब लोगों (प्रजा) से ऊँचा हो जाता है।

२. इन पंक्तियों के लेखक ने वामन-अवतार की कथा के उद्भव और क्रमिक विकास पर १९६३-६६ में एक शोध प्रबन्ध लिखा था, जिस पर उसे फ्राईबुर्ग वि० वि० (प० जर्मनी) से डॉ० फिल्० की उपाधि प्राप्त हुई है। द्रष्टव्य — *Der Ursprung und die Entwicklung der Vāmana-Legende in der indischen Literatur,* Otto Harrassowitz, Wiesbaden 1968.

डॉ० गयाचरण त्रिपाठी कृत 'वैदिक देवता' पुस्तक वैदिक देवताओं के स्वरूप तथा विकास का विवरण प्रस्तुत करने में सर्वथा सार्वभौमिक मार्ग का अवलम्बन कर रही है। लेखक ने इसे प्रमेय-प्रबल तथा प्रमाण-पुरस्कृत करने में कोई भी साधन छोड़ नहीं रखा है। विकास की धारा ब्राह्मण-ग्रन्थों तथा कल्पसूत्रों से होकर पुराण तथा इतिहास ग्रन्थ – *रामायण* तथा *महाभारत* – तक बड़ी ही विशद रीति से प्रवाहित होती दिखलाई गई है। इस कार्य के लिए लेखक के समीक्षण, अनुशीलन तथा सूक्ष्मेक्षिका की जितनी प्रशंसा की जाए, थोड़ी ही है। अपने सिद्धान्तों की पुष्टि के लिए इन दुर्लभ ग्रन्थों से पुष्कल उद्धरण देकर तथा उनका साङ्गोपाङ्ग विश्लेषण कर लेखक ने विज्ञ-पाठकों के सामने सोचने-विचारने, समझने-बूझने के लिए पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत कर दी है जो नितान्त उपादेय, आवर्जक तथा आकर्षक है। वैदिक तथ्यों के अन्तराल में प्रवेश करने की लेखक की क्षमता तथा विश्लेषण-प्रवणता के ऊपर आलोचक का मन रीझ उठता है और वह शतशः उसको धन्यवाद देने के लिए लालायित हो जाता है। इसी ग्रन्थ के अध्ययन के लिए यदि वह वैदिक तत्त्वजिज्ञासु जनों को राष्ट्रभाषा सीखने के लिए हठात् आग्रह कर बैठता है, तो यह अर्थवाद नहीं, तथ्यवाद है। मैं तो कृति पर सर्वथा मुग्ध हो गया हूँ, नूतन तथ्यों के विश्लेषण से सर्वथा आप्यायित हूँ और भागवान् से प्रार्थना करता हूँ कि विद्वान् लेखक महोदय इसी प्रकार के गम्भीर तथ्यों के विवेचक-प्रकाशक ग्रन्थों से सरस्वती का भण्डार भरते रहें। तथास्तु।

बसन्त पञ्चमी, वि. सं. २०४२ **पद्मविभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय**

(आभार - गङ्गानाथ झा केन्द्रिय संस्कृत विद्यापीठ - शोध पत्रिका)

ISBN 812460591-2

9 788124 605912